P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-4* ISSUE-1* (Part-2) April- 2019
E: ISSN NO.: 2455-0817 *Remarking An Analisation*

ऐतिहासिक सन्दर्भ में पर्यावरण संरक्षण की वर्तमान प्रासंगिकता

आशा सुनारीवाल
सहायक आचार्य,
इतिहास विभाग,
राजकीय महाविद्यालय,
सूरतगढ़, श्रीगंगानगर,
राजस्थान, भारत

महबूब खान मुगल
सहायक आचार्य,
भूगोल विभाग,
राजकीय महाविधालय,
सूरतगढ़, श्रीगंगानगर,
राजस्थान, भारत

सारांश

विश्व में पर्यावरण की समस्या आज के मनुष्य के लिए सबसे बड़ी चुनौती बनकर सामने आई है। आधुनिक समय में अनेक पर्यावरणविद् इस समस्या को सुलझाने का प्रयत्न कर रहे हैं। यह नहीं कहा जा सकता है कि पर्यावरण पर ध्यान दिया जाना केवल आधुनिक समय की ही देन है बल्कि प्राचीन समय वैदिक काल में भी पर्यावरण संरक्षण का बहुत अधिक महत्व था। पर्यावरण संरक्षण का भारतीय वेदों एवं पुराणों में प्रमुखता से वर्णन किया गया है। ऐसी मान्यता है कि सृष्टि रचना के पांच आधारभूत तत्व हैं जल, अग्नि, वायु, पृथ्वी तथा आकाश। भारत के प्राचीनतम ग्रंथ वेदों में जल, अग्नि, वायु व पृथ्वी की विस्तार से व्याख्या की गई है। ऋग्वेद में अग्नि के रूप, कार्य और गुणों की व्याख्या की गई है, तो यजुर्वेद में वायु के विविध रूपों और गुण–धर्म का वर्णन किया गया है। सामवेद में जल–तत्व की तो अथर्ववेद में पृथ्वी–तत्व की व्याख्या की गई है। स्पष्ट है कि हमारे प्राचीनतम् ग्रंथ पर्यावरण–संरक्षण का महत्वपूर्ण उदाहरण प्रस्तुत करते हैं।

मुख्य शब्द : पर्यावरण संरक्षण, भारतीय वेद।

प्रस्तावना

प्राचीन समय में प्रकृति अत्यन्त पवित्र थी। प्रकर्षा कृतिः प्रकृति रिति। अर्थात ईश्वर का सर्वोत्कृष्ट रत्न। प्राचीन समय में प्राकृतिक पर्यावरण मानव के लिए महत्वपूर्ण था। उस समय मानव की दिनचर्या प्रकृति पर आधारित थी। भूमि, वृक्ष, पहाड़, नदियां, समुन्द्र, झीलें, झरने, तालाब, कुऍं, बारिश, पशु–पक्षी, वन और वन्य जीव–जन्तु, वायु आदि् प्राकृतिक स्त्रोत मानव जीवन के महत्वपूर्ण पक्ष माने जाते थे। प्राचीन भारतीय संस्कृति प्रकृति प्रेमी थी। ऋषि मुनियों की सम्पूर्ण दिनचर्या प्रकृति आधारित थी। मानव के मानसिक कर्म, बाह्य कर्मों के जनक है, इसी प्रकार मनुष्यों के मानसिक व बाह्य कर्मों के समग्र को समाज का कर्म–जनित या व्यवहार–जनित पर्यावरण कहा जाता है। जिसका प्रभाव बाह्य/भौतिक पर्यावरण पर पड़ता है। इसलिए हमारे ऋषि–मुनियों ने पर्यावरण शिक्षा को धर्म और नैतिकता से जोड़ दिया था। पर्यावरण से सम्बन्धित विपुल प्रसंग तथा व्याख्यायें हमारे वेदों, उपनिषदों, पुराणों तथा अन्य प्राचीन ग्रंथों में भरी पड़ी है। पर्यावरण संरक्षण आज विश्व का सर्वाधिक चर्चित और चिंतनीय विषय है, विकसित और विकासशील देश इस पीड़ा से ग्रसित है। औद्योगिक एवं बौद्धिक विकास के परिणाम स्वरूप प्रकृति एवं मानव के मध्य उत्पन्न असंतुलन के कारण पर्यावरण घातक रूप से प्रदूषित हो रहा है। पर्यावरण संरक्षण के प्रति प्राचीन भारतीय चिन्तन की गौरवशाली परम्परा अत्यन्त समृद्ध है, जिसको जानने की वर्तमान समय मे महत्ती आवयकता हैं।

अध्ययन का उद्देश्य

1. समस्त जीव–जन्तु, पेड़–पौधे शुद्ध पर्यावरण में विकास करते है।
2. पर्यावरण असन्तुलन अनेक विकारों, रोगों को जन्म देता है।
3. भौतिक संस्कृति, पर्यावरण को प्रभावित करती है।
4. जलवायु परिवर्तन पर्यावरण को पहुँचाई क्षति के परिणाम है।
5. हमारी धार्मिक मान्यताएं पर्यावरण को शुद्ध बनाये रखने और इसके संरक्षण पर जोर देती है।

शोध प्रविधि

लघु सर्वेक्षण, सन्दर्भ पुस्तकें, पत्र–पत्रिकाएँ।

पर्यावरण का अर्थ

पर्यावरण अत्यन्त व्यापक शब्द है। इसमें समस्त भौतिक और जैविक व्यवस्था शामिल है जिसमें सभी जीवधारी रहते हुए अपनी स्वाभाविक प्रवृतियों का विकास करते है। पर्यावरण का अर्थ चारों और से आवृत किए हुए। हमारे चारों और का वातावरण जो हमें घेरे हुए है। हमें और अन्य जीवधारियों को प्रभावित करता है। वही पर्यावरण है। मनुष्य और पर्यावरण का अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है। यही कारण है, कि दोनों परस्पर अपनी क्रियाओं से एक दूसरे को प्रभावित करते रहते है।

पर्यावरण तत्वों की शुद्धता (संरक्षण, परिवर्धन)

भूमि

प्राचीन समय में प्रकृति और मानव का सम्बन्ध एक दूसरे पर आधारित था। भूमि को ईश्वर का रुप माना गया। अथर्ववेद के 12वें काण्ड के प्रथम सूक्त में कहा गया है–

माता भूमिः पुत्रो अहं पृथिव्याः।[1]

अर्थात भूमि हमारी माता है, और हम उसके पुत्र है। सामवेद में पृथ्वी को रत्नों का भण्डार कहा गया है

दधाति रत्नं स्वद्ययो रपीध्यं। [2]

यजुर्वेद में मृदा को उर्वरक बनाने ओर प्रदूषित न करने की शिक्षा दी गई

पृथ्वी रूढ़ पृथ्वी मा हिंसा। [3]

यजुर्वेद में विवरण है कि द्यु–भू अर्थात आकाश–पृथ्वी ,पिता–माता तुल्य है, इनकी रक्षा करना और प्रदूषण से मुक्त रखना हमारा कर्तव्य है। [4]

स्थल, पहाड़, पेड़–पौधे, मरूस्थल, पर्वत, नदियां, झीलें, जीव–जन्तु, खनिज–पदार्थ, मौसम, ऋतुएँ आदि पृथ्वी से सम्बन्धित हैं। पृथ्वी हमारे कल्याण के लिए हमें सब कुछ देती है।

हमारे ऋषि–मुनियों ने प्रकृति के रहस्यों को जानने का प्रयास किया। वे इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि यह सृष्टि पंच–भूतों पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश के सामंजस्य से बनी है। वैदिक ऋषियों ने पूर्णता प्रदूषण मुक्त धरा की कल्पना की है। पर्यावरण संरक्षण आज विश्व का सर्वाधिक चर्चित और चिंतनीय विषय है। औद्योगिक एवं बौद्धिक विकास के परिणाम स्वरूप प्रकृति एवं मानव के मध्य उत्पन्न असंतुलन के कारण पर्यावरण घातक रूप से प्रदूषित हो रहा है, इसी संदर्भ में पर्यावरण संरक्षण के प्रति जागरूक होने की अधिक आवश्यकता है। ऐतिहासिक संदर्भ में देखें तो इस प्रकार की समस्या देखने को नहीं मिलती है मानव ने अपने विकास के आरंभिक दिनों में प्रगति की दिशा निर्धारित करते समय प्रकृति के संतुलन का सदैव ध्यान रखा था। प्राचीन काल में प्रकृति अत्यंत पवित्र थी। मनुष्य और प्रकृति के अन्योन्याश्रित संबंध को हमारे ऋषि–मुनियों ने बड़ी गहराई से समझा था।

जल

वैदिक ऋषियों ने जल की शुद्धता को अधिक महत्व दिया है। जल जीवन है, अमृत है, भेषज है, रोग नाशक है और आयुवर्धक है। जल को दूषित करना पाप माना गया है। जल में सब रोगों का नाश करने की क्षमता होती है। जल को विभिन्न रोगों का वैध बताया गया है। आयुर्वेद में जल की महिमा का गुणगान किया गया है। वर्षा का जल अमृत के समान होता है। यह जीवन के लिए औषधि का काम करता है।[5]

जल और वायु तथा जल और वनस्पतियों का घनिष्ठ संबंध होता है। जल और वनस्पतियाँ हमारे मित्र के तुल्य हैं। जल ऊर्जा का स्त्रोत है। वेदों में नदियों और समुद्र को मनुष्य का सुख–साधक बताया गया है। सरस्वती और सिंधु आदि नदियाँ हमें इसी प्रकार सुखी बनावें, जैसे वर्षा औषधियों को।[6]

समुंद्र को वर्षा का आधार बताया गया है। यह विद्युत का केंद्र है। समुंद्र रत्न आदि धन का दाता है।[7]

स्वच्छ जल एवं स्वच्छ परिवेश किसी भी सामाजिक वातावरण के पल्लवन एवं विकास की अनिवार्य आवश्यकता है। जीव–जन्तुओं हेतु अनुकूल परिस्थितियों में ही जीव–जन्तुओं का समाज पुष्पित–पल्लवित होता है। अतः सामाजिक विकास में पर्यावरण तथा जल संरक्षण की आवश्यकता को विस्मृत नहीं किया जा सकता। जल प्रदूषण रोकने तथा प्रदूषण करने के दोषियों को दंड देने का विवरण भी हमारे ग्रंथों में मिलता है। मनु ने मनुस्मृति में लिखा है कि ''किसी भी व्यक्ति को पानी में पेशाब, मल अथवा थूकना नहीं चाहिए। किसी भी वस्तु को जो इन अपवित्र वस्तुओं रक्त और विष से मिश्रित हो, जल में नहीं डालना चाहिए''

मूत्र वाश्ष्थ पुरीषं वा गंगातीरे करोतियः।
न दृष्टा निष्कृतिस्तस्य कल्पकोटि शतैरपि।।

शुद्ध जल मनुष्य को दीर्घायु प्रदान करने वाला प्राणों का रक्षक एवं कल्याणकारी है।

शं नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये।
शं योरभि स्त्रवन्तु नः।।[8]

आज जल, प्रदूषण से अछूता नहीं है। गंगा का जल प्रदूषित हो चुका है। जिसको स्वच्छ करने का कार्य प्रारम्भ हो चुका हैं। प्रदूषित जल स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। कारखानों से निकलने वाला रसायन जल प्रदूषण का प्रमुख कारण है। पीने योग्य जल का संकट भारत में बना हुआ है। हमे जल का अपव्यय को भी रोकना होगा।

प्राचीन समय में नदियों आदि के जल प्रदूषण रहित करने के विशिष्ट उपायों में यज्ञ एक महत्वपूर्ण घटक है। इसकी सुगन्धित वायु जल के विष तत्व का विनाश करती है। सूर्यताप को जल में पहुंचाना जल शोधन का विशिष्ट उपाय है। कुश नामक घास जलशोधन की महत्वपूर्ण घटक है। आज से सैकड़ों वर्ष पूर्व जब कल–कारखानों और उद्योग धंधों का विस्तार और प्रदूषण न के बराबर था, उस समय की मनीषियों ने भावी प्रदूषण की आशंका में मनुष्य को इस प्रकार से सावचेत किया है।

वृक्ष–वनस्पतियों की पर्यावरण में भूमिका

वृक्ष पर्यावरण के सजग प्रहरी हैं। वृक्ष–वनस्पतियां विषैली एवं हानिकारक गैसों को अवशोषित करते हैं तथा प्राणियों के लिए जीवन दायक वायु ऑक्सीजन उपलब्ध करवाते हैं। प्राचीन ऋषि–मुनियों को यह भली भांति ज्ञात था, कि पेड़–पौधे वनस्पति मानव जीवन का आधार है इसलिए इनकी स्तुति, संवर्धन,

संरक्षण समर्थन से संबंधित ऋचाएं प्राचीन ग्रंथों में मिलती है।

ऊँ द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः
शान्तिरोषधयः शान्तिः वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः
शान्ति ब्रह्म शान्तिः सर्व शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः
सा मा शान्तिरेधि।[9]

अर्थात द्यौः, अन्तरिक्ष, जल, वायु औषधियाँ, वनस्पतियां और पृथ्वी आदि सभी में शांति बनी रहे, जिससे सब और से शांति प्राप्त हो। पर्यावरण के सभी घटक जल, वायु, वनस्पति और पृथ्वी आदि में सभी में शांति अर्थात संतुलन बना रहे।

ऋग्वेद में कहा गया है कि वृक्ष मानव के लिए कल्याणकारी है इन्हें काटना नहीं चाहिए –

म काकम्बीरमुद् वृहो वनस्पतिम शस्तीर्विहिनीनशः। ऋग्वेद 6/48/17

इसी प्रकार से जल में उगने वाले पौधे, आकाश, वन तथा वृक्षों से आच्छादित पर्वत प्रदूषण कम करते है–

आपः औषधीरूत नोऽवन्तु, द्यौर्वना गिरयो वृक्ष केशाः। तदेव–5/41/11

यजुर्वेद में वृक्षों को दुष्प्रभाव का शमन करने वाला कहा गया है–

वनस्पर्ति शमीतारम्। यजुर्वेद–28/10
वनस्पतिः शमिता। तदेव–29/35

यजुर्वेद की ऋचा में कहा गया है कि जितना तुम वनों को बढ़ाओगे उतना तुम भी आगे बढ़ोगे–

अतस्त्वं देवं वनस्पते शतवल्शो विरोह।
सहस्त्रवल्शा वि वयं रूहेम। ऋग्वेद– 5/43

वेदो में जड़, शाखा, वनस्पति, फल, औषधि सब को स्वस्थ रखने की प्रार्थना की गई है–

मूलेभ्यः स्वाहा। शाखाभ्य स्वाहा।
वनस्पतिभ्य स्वाहा, फलेभ्य स्वाहा
स्वाहौषधीभ्यः स्वाहा।
तदेव–22/28

वृक्ष, वनस्पतियां और वायुशोधन :

वृक्ष और वनस्पतियां वायुशोधन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। . अथर्ववेद में वर्णन है कि– वृक्ष–वनस्पतियां प्रदूषण दूर करती है तथा तथा वायुशोधन करती है–

तामा सहस्त्रपर्ण्यो मृत्योः मुञ्चत्वंहसः।
अथर्ववेद–8/7/12
मा ते मम मृग्वरि मा ते हश्दयमर्पितम्।
तदेव–12/1/35

वेदों में वृक्षों को देवत्व की संज्ञा दी गई और उनकी स्तुति की गई है।

मनुष्य आज स्वार्थवश वृक्षों एवं वनों की कटाई कर रहा है और नये वृक्ष नहीं लगा रहा है।

प्राचीन भारतीय ग्रंथ ऋग्वेद में ऋषि वृक्षों की कटाई की निंदा करते हुए कहते हैं–''जिस प्रकार दुष्ट बाज पक्षी दूसरे पखेरूओं की गर्दन मरोड़ कर उन्हें दुःख देता और मार डालता है, तुम वैसे ना बनो और इन वृक्षों को दुःख न दो, इनका उच्छेदन न करो। ये पशु–पक्षियों और जीव–जन्तुओं को शरण देते हैं।''[10]

मतस्य पुराण में वृक्षों की महत्ता के सम्बन्ध में कहा गया है–

दशकूप समोवापी, दशवापी समोह्रदः।
दशह्रद समः पुत्रो, दश पुत्र समो द्रुमः।[11]

अर्थात दस कुओं के बराबर एक बावड़ी होती है, दस बावड़ी के बराबर एक तालाब होता है। दस तालाबों के समान एक पुत्र होता है और दस पुत्रों के समान एक वृक्ष होता है।

इसलिए हमें वनों और वृक्षों के महत्व को जानने की आवश्यकता है।

वैदिक जीवन एवं चिंतन पर्यावरण से ओतप्रोत था। वर्तमान में जब संपूर्ण विश्व पर्यावरण प्रदूषण की त्रासदी से जूझ रहा है ऐसे में वैदिक विषयों का यह संदेश कि वृक्ष नहीं अपितु वन लगाओ, क्योंकि वृक्षों के द्वारा ही प्रदुषण रुकेगा वृक्षों के द्वारा इस पृथ्वी का भूकंप से बचाव होगा।

पशु–पक्षी

पर्यावरण को संतुलित रखने में पशु भी महत्वपूर्ण घटक है। वेद में पशुओं से मित्रवत व्यवहार की बात कही गई है। यजुर्वेद में पशुओं के प्रति हिंसा न करने और उनकी रक्षा की बात कही गई है। यजुर्वेद में एक अन्य स्थल पर मानव को पशुओं की रक्षा का निर्देश दिया गया है। अथर्ववेद में घर में आने वाली वधू से यह कामना की गई है कि वह पशुओं के साथ स्नेह का भाव रखें। प्राचीन काल में पशु मानव के लिए किसी न किसी रूप में महत्वपूर्ण माने जाते थे। गाय, बैल, भैंस, भेड़ बकरी, कुत्ता, घोड़ा, हाथी, कबूतर, तोता, मैना, कोयल आदि सभी महत्वपूर्ण माने जाते थे। इसलिए यजुर्वेद में यह कहा गया है कि पशुओं को निर्भय होकर रहने दे।

पशु पक्षियों का रक्षण

वर्तमान में हमें अपनी स्वार्थ लिप्सा के लालच में पर्यावरण को क्षति पहुंचा रहे हैं, वनों और पेड़ पौधों की कटाई कर पशु पक्षियों का आश्रय स्थल और उनकी खाद्य सामग्री को नष्ट कर रहे हैं। मूक प्राणी इतना बेबस, लाचार है कि बोलकर मनुष्य को अपना दुख नहीं कह सकता। हम अपना लालच छोड़ नहीं सकते, हमें अच्छे हवादार आश्रय स्थलों के साथ सजावटी फर्नीचर, दरवाजे, खिड़कियां चाहिए, लेदर के पर्स, बेल्ट और कोसमैटिक सामग्री चाहिए। हमने पशु– पक्षियों छोटे जीव–जन्तुओं के लिए न आश्रय स्थल, खाद्यान्न और न ही जल स्त्रोत छोड़े है ऐसे में मूक प्राणी इधर–उधर जीवित रहने की आशा में भटकता फिरता है और स्वयं और कई बार मानव के जीवन को संकटग्रस्त कर देता है। शहरों एवं गाँवों में वो कचरा और प्लास्टिक खाने को मजबूर हैं, नालियों का गंदा पानी पी कर अपना जीवन चला रहा हैं। पशुओं को मानव अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए पाल रहा है किंतु जब वह कोई काम का नहीं रहता है तो उसे आवारा छोड़ दिया जाता है, मरने के लिए, क्योंकि हमने जीवित रहने के लिए कुछ छोड़ा ही नहीं है। न समाज के पास, न सरकार के पास कोई सार्थक योजना है जिससे इनका रक्षण, संवर्धन हो। जो प्रयास किए गये है वह ना के बराबर है।

ऐसे में ऐतिहासिक संदर्भ में देखें तो प्राचीन समय में मानव और पशु–पक्षी का मित्रवत व्यवहार था। पशु उनके लिए धार्मिक मान्यताओं, द्वारा देवी देवताओं के वाहनों से जुड़े हुए थे और पशु–पक्षियों को क्षति पहुंचाने की बात मानव नहीं करता था। पशुओं के प्रति दयालु और मित्रवत व्यवहार सौहार्द पूर्ण वातावरण उपलब्ध करवाता था, जिसकी वर्तमान समय में आवश्यकता है। प्राचीन समय पुराने घरों में घर के बाहर कुंडे बनवाए जाते थे ताकि उस में पशु पक्षी पानी पी सके, खाना खा सके। लेकिन आजकल तो वह भी नहीं बनवाए जाते, जहाँ बने हुए है वहां कुंडों के आसपास गंदगी है। हमारे पास समय ही नहीं है कि हम उन्हें खाना और पानी डाल सके और इनकी स्वच्छता का ध्यान रख सकें।

ध्वनि प्रदूषण

ध्वनि प्रदुषण के विषय में हमारे मनीषियों की जागरूकता प्रंशसनीय है, वेदों में कहा गया है कि मनुष्य को आचरण की मर्यादा निर्धारित करके ध्वनि का प्रयोग करना चाहिए। ध्वनि का संयमित प्रयोग करना चाहिए अन्यथा पर्यावरण प्रदूषित होता है। अतः मधुर मन्द ध्वनि में बोलना चाहिए। समुधुर, कर्णप्रिय संगीत का आनंद लेना चाहिए।

मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षन्मा स्वसारमुत स्वसा।
सम्यस्चः सव्रता भूत्वा वाचं वदत भद्रया।।

अथर्ववेद 3/30/3

शब्द शक्ति शुभ और अशुभ दोनों है। शोर के रूप में ध्वनि जहां हानिकारक प्रदूषण उत्पन्न करती है, वहीं ध्वनि का सदुपयोग सुख और शांति प्रदान करती है।

अन्तर्मृत्यु दधता पर्वतेन।

ऋग् शा0 सं0 10/18/4

शतपथ ब्राह्मण में कहा गया है कि मधुर वचन औषधि के समान होते हैं। संगीत भक्ति–पूजा का महत्वपूर्ण अंग है। ऊँची आवाज में रेडियो, ट्रांजिस्टर, टी.वी., ध्वनि प्रसारक यंत्र सिर–दर्द तनाव अनिद्रा आदि फैला रहे हैं। इसलिए वेदों में कहा गया है कि स्वास्थ्य की दृष्टि से तीखी ध्वनि से बचना चाहिए और मधुर और धीमा बोलना चाहिए।

जिह्वाया अग्रे मधु मे जिह्वामूले मधूलकम्।
ममेदह क्रतावसो मम चित्तमुपायसि।

अथर्ववेद–1/34/2

अर्थात मेरी जीभ से मधुर शब्द निकले। भगवान का भजन–पूजन–कीर्तन करते समय मूल में मधुरता हो। मधुरता मेरे कर्म में हो, मेरे चित्त में मधुरता हो। इस प्रकार वेदों मैं हमें पर्यावरण प्रदूषण निवारण के संकेत मिलते हैं।

वायु संरक्षण

शुद्ध प्राणवायु जीवन अस्तित्व के लिए आवश्यक है। वायु प्रदूषण से मनुष्य के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है, इससे श्वसन संबंधी रोग जैसे फेफड़ो का कैन्सर, अस्थमा आदि हो जाते हैं। कारखानों तथा शहरों में सांस लेना भी दूभर हो रहा है। दिल्ली में वायु प्रदूषण सबसे ज्यादा है। कारखानों से निकलने वाली जहरीली गैस वायु को प्रदूषित करती है और अनेक बीमारियों का कारण बन जाती है। शहरीकरण, पर्यावरण को पहुंचाई क्षति और भौतिकतावादी संस्कृति को अपनाने से वायु प्रदूषित हो रही है। वातवरण में घुलती जहरीली गैसे विकलांगता एवं स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं में वृद्धि करती है।

सजीव जगत के लिए पर्यावरण की रक्षा में वायु का स्वच्छ होना जरूरी है, बिना शुद्ध वायु के जीवन दुभर हो जायेगा। सृष्टि ने हमारे चारों और शुद्ध वायु का आवरण उपलब्ध कर रखा है। हमारे शरीर के अन्दर रक्तवाहिनियों में बहते हुए रक्त के दवाब को प्राणवायु संतुलित रखती है। प्राणवायु के दूषित होने पर रक्त का दवाब बढ़ने से धमनियां फट सकती है। पेड़–पौधे दूषित वायु का अवशोषण कर हमें प्राणवायु उपलब्ध करवाते हैं, इसलिए पेड़ पौधों का होना आवश्यक है, ये वायु की शुद्धि कर हमारी प्राण रक्षा करते है।

वायु की शुद्धि जीवन के लिये सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं इसे यजुर्वेद में इस प्रकार स्पष्ट किया गया है–

तनूनपादसुरौ विश्ववेदा देवो देवेषु देवः।
पथो अनक्तु मध्वा घृतेन।। यजुर्वेद–27/12

शुद्ध वायु कई रोगो के लिए औषधि का काम करती है।

आ त्वागमं शन्तातिभिरयो अरिष्टतातिभिः।
दक्षं ते भद्रमाभार्ष परा यक्ष्मं सुवामि ते।।

ऋक् 10/186/6

अर्थात शुद्ध वायु जीर्ण रोग, हृदय रोग, तपेदिक, निमोनिया जैसे घातक रोगों में औषधि के समान है।

वात आ वातु भेषजं शंभु मयोभु नो हृदे।
प्रण आयूँषि तारिषत्।। ऋक्0 10/186/1

अर्थात शुद्ध ताजी हवा अमूल्य औषधि है।

अथर्ववेद में पर्यावरण शोधक तत्वों का उल्लेख है।

ये पर्वताः सोमपृष्ठा आपः।
वातः पर्जन्य आदग्निस्ते क्रव्यादमशीशमन।।[12]

पर्वत, जल, वायु, वर्षा और अग्नि पर्यावरण को शुद्ध करने वाले तत्व है।

शतपथ ब्राह्मण में यज्ञ द्धारा वायु शुद्धि की बात कही गई है। अग्नि से धूम धूम से मेध और मेधो से वृष्टि होती है।

अग्नेवैंधूमो जायते धूमादभ्रमभमाद् वृष्टिः

अथर्ववेद मे यज्ञ द्वारा अग्नि में कृमि नाशक औषधियों की आहुति दे कर इन रोग कृमियों को नष्ट कर सकते है। वायु के विषैले तत्व कम हो सकते है।

इदं हविर्यातुधनान नदी के नमिवाबहत।

अथर्ववेद 1/8/1

न तं यक्ष्मा अरून्धते नैनशपथको अश्नुते।
यं मेषजस्यं गुग्गुलो सुरभिर्गन्धो अश्नुते।।

अथर्ववेद 3/11/2

अग्नि में डाली हुई हवि रोग–कृमियों को उसी प्रकार दूर बहा ले जाती है, जिस प्रकार नदी पानी के झागों को।

पर्यावरण प्रदूषण और मानसिक विकार

मानव के मानसिक कर्म, बाह्य कर्मो जिसे हम भौतिक कर्म कहते है, को प्रभावित करता है। यदि मानसिक कर्मो में पवित्रता होती है। तो बाह्य कर्मो में भी

दिखलाई पड़ती है। व्यक्ति और व्यक्तियों के सामुहिक कर्म समाज का प्रतिनिधत्व करते हैं, हमारे ऋषि–मुनियों ने इस बात को गहराई से समझा था, कि मनुष्य के पवित्र विचार पर्यावरण का रक्षण, परिर्वधन करते हैं, मानव अपने वास्तविक स्वरूप में निश्पाप ही होता हैं। अशुभ/ बुरे मानसिक विचार व कर्म वह सामाजिक वातावरण से भी सिखाता है। यदि इन अशुभ/बुरे विचार, कर्म का परित्याग कर दे तो उसका वास्तविक स्वरूप ईश्वरीय हो जाता है। तब भौतिक पर्यावरण के स्वरूप को क्षति नहीं पहुँचाता है।

उसकी स्वार्थमयी प्रवृत्ति के कारण प्रकृति से तारतम्य नहीं जोड़ पा रहा है।

उत्तरदायित्व की भावना प्रदूषित हो चुकी है, उसका नैतिक पतन पराकाष्ठा पर पहुंच चुका है, वह संस्कृति के मूल तत्वों अहिंसा, प्रेम, त्याग मेत्री–भाव से कोसों दूर होता जा रहा है। हम विकास की ओर अग्रसर हो रहे हैं लेकिन प्रदूषण की भयावहता हमें खाये जा रही है जिसे हम दिनकर की पंक्तियों में इस प्रकार कह सकते हैं

'एक छोटी एक सीधी बात,
विश्व में छायी हुई है वासना की रात।
बुद्धि मे नभ की सुरभि तन में रुधिर की कीच,
यह वचन से देवता, पर कर्म से पशु नीच।

भौतिक संस्कृति पर्यावरण पर प्रभाव

भौतिक विकास और औद्योगीकरण के नाम पर मानव आज प्राकृतिक संसाधनों का दोहन कर रहा है, 21 वी शताब्दी में हम प्रवेश कर चुके है, धरती पर मानवीय बोझ, बढ़ा है। व्यक्ति, समाज, देश सभी आगे बढने की भावना, जीवन को आरामदाक बनाने, सुखमय बनाने नगरों ,कल–कारखानों का विकास, रोगों पर विजय, आवागमन के साधनों का विकास, रहन–सहन के तरीके ,प्रतिरक्षा के साधन में बेतहा प्रगति हो रही है। फलत पर्यावरण, और उसके संसाधनों का दोहन हो रहा है, दूसरी और गरीबी, अशिक्षा, लाचारी भी अनेक प्रकार से पर्यावरण को प्रदूषित कर रहे है।

हमारे देश में जनसंख्या विस्फोट एवं मानव की गतिविधियों के परिणाम स्वरूप जल प्रदूषण, वायु प्रदूषण, भूमि प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण के साथ–साथ संकीर्णता, अपराध, निर्धनता, कुपोषण, मानसिक विकारों, स्वार्थ, क्रोध, लोभ, लालच, आजीविका हेतु आदि भी हमारे लिए घातक सिद्ध हो रहे हैं। हमारे ऋषि–मुनियों ने हजारों वर्षो पूर्व एक ऐसा चिंतन हमें उपल्बध करवाते जिसकी आज आवश्यकता है।

जलवायु परिर्वन

पर्यावरण प्रदूषण के कारण आज जलवायु परिवर्तन एक वैश्विक संकट माना जा रहा है। यह विश्व स्तर पर एक चिंतनीय विषय बन गया है जलवायु परिवर्तन पर विचार करने के लिए विश्व के अनेक देश एक मंच पर अनेकों बार एकत्रित हुए हैं। जलवायु परिवर्तन के कारण दुनिया के द्वीपों का अस्तित्व संकटग्रस्त हो रहा है। प्राकृतिक आपदायें जैसे– बाढ़, सूखा, समुद्री तूफान, आदि की प्रवृति बढ़ रही है। जलवायु परिवर्तन का सबसे अधिक दुष्प्रभाव फसलों पर पड़ता है, इससे फसलों की उत्पादकता कम होती है और किसान का जीवन संकटग्रस्त हो जाता है। जीवनावश्यक खाद्य आपूर्ति कम हो जाती है, वस्तुओं के मूल्य बढ़ जाते हैं और भावी गुणवत्ता भी कमजोर हो जाती है। रेगिस्तानी इलाको में रेतीले टीलों को काटकर बड़ी संख्या में भवन–निर्माण हो रहा है, पहाड़ों को काटकर भी भवन–निर्माण कार्य हो रहा है। खेती योग्य भूमि पानी की कमी और फसलों के खराब होने के कारण बेची जा रही है, उन पर भी भवन निर्माण, फैक्टरी और होटल बन रहे है। जलवायु परिवर्तन के विषय पर विश्व स्तर पर अनेक सम्मेलन आयोजित किये गये है किन्तु यहाँ भी विकसित राष्ट्रों की स्पष्ट नीति न होने के कारण और विकासशील राष्ट्रों की विकसित राष्ट्रा के द्धारा आर्थिक व तकनीकी मदद के लिए आगे न आने से इस सम्बन्ध में आवश्यक कार्य होना सम्भव नहीं हो पाया है।

धार्मिक मान्यताएँ पर्यावरण की रक्षिता

प्राचीन समय से ही हमारी धार्मिक मान्यताएं हमें पर्यावरण के साथ जोड़ कर रखे हुए हैं। वेद, उपनिषद्, पुराण, मनुस्मृति आदि धार्मिक और साहित्यिक ग्रंथ व राजनैतिक ग्रंथ, राजाओं के राज धर्म का प्रकृति व प्रकृति से जुड़े तथ्यों के साथ गहरा लगाव था। धर्म में प्रकृति के पंच तत्वों और जीव–जन्तुओं, पशु–पक्षियों को किसी न किसी देवता से जोड़कर अन्यथा धार्मिक मान्यताओं से संबंधित कर उनके रक्षण और संतुलित उपयोग पर बल दिया गया है। कुछ आदिवासी कबीलों की मान्यताएं भी इसी प्रकार की रही है।

भारतीय परंपराओं के अलावा बौद्ध और जैन साहित्य में वन यात्राओं एवं वृक्ष महोत्सवों का सुन्दर वर्णन मिलता है, बौद्ध और जैन परंपराओं में वृक्षों को सम्मान एवं अदब की दृष्टि से देखा गया है। ग्रीक परंपरा में एडाडिनाअरिस, ओरिसस, डिमीटर जन्यया वनस्पति के देवता माने गए हैं। डायनिसस मदिरा और अंगूरलता का देवता था। एकेसियस आर्टेमिस देवता का आवास ओक वृक्ष के कोटर में माना जाता था। पूर्वी अफ्रीका के बानिका नामक कबीले में पेड़ काटना मातृहंता जैसा जघन्य अपराध माना जाता है।

सिक्ख और इस्लाम धर्म प्राकृतिक प्रदत् संसाधनों को आवश्यकतानुसार सीमित और आवश्यक उपयोग पर ही बल देते हैं। प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन, उथल–पथल उत्पन्न कर सकता है। इसी प्रकार इसाई धर्म आज प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक उपयोग के दुष्परिणामों को जाने के बाद, प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण, संवर्धन हेतु अनेक कार्यक्रम विश्व स्तर पर चला रहा है और उनके रक्षा एवं विकास के लिए तकनीकी और आर्थिक मदद भी उपलब्ध करवा रहा है। कहने का मतलब है कि हमारी धार्मिक मान्यता और विश्वास हमें पर्यावरण संरक्षण के प्रति सचेत करते हैं।

निष्कर्ष

प्रकृति अपना कार्य पूर्वव्रत करती रहें, इसके लिए पर्यावरण के संरक्षण और संवर्धन की चिंता करना आवश्यक है, वैदिक साहित्य हजारों वर्षों पूर्व लिखा गया था परंतु उसके सिद्धांत आज भी अकाट्य हैं और

जीव–जगत के लिए कल्याणकारी आधुनिकता के नाम पर पर्यावरण की अवमानना हमारी आदत बन गई है। लेकिन हम भूल गए कि मनुष्य भी प्रकृति का एक महत्वपूर्ण घटक है, और मनुष्य को अपने विकास के लिए पर्यावरण पर ध्यान देना ही पड़ेगा। प्रकृति के साथ किये गये खिलवाड़ से सबसे ज्यादा प्रभाव उसी पर पड़ने वाला है। पर्यावरण से परे मनुष्य का कोई अस्तित्व नही है। इसलिए मनुष्य अपना सामाजिक और आर्थिक विकास करते समय प्राकृतिक संसाधनों का उचित उपयोग करे तो जैविक एंव भौतिक तत्वों का संतुलन बना रहेगा। इसलिए आज आवश्यकता इस बात की है कि हम अपने पूर्वजों और ऋषि–मुनियों के सुविचार और सुंदर चिंतन जो पर्यावरण संरक्षण और संवर्धन के संबंध में दिए गए थे उसका चिंतन करें, उसे पढ़े, उसे प्रचारित करे और उस सम्बन्ध में जागरूकता फैलाएं और विभिन्न माध्यमों से जो भी संभव हो हमें इसका प्रचार–प्रसार करना चाहिए जब तक कि वह हमारी आदतों में शामिल न हो जाये।

अंत टिप्पणी

1. *अथर्ववेद–12/1/12*
2. *सामवेद–10/31*
3. *यजुर्वेद–13/14.*
4. *यजुर्वेद 2/11.*
5. *अथर्ववेद 1.5.4*
6. *ऋग्वेद 6.52.6*
7. *ऋग्वेद 5.43.1*
8. *ऋग्वेद–10/9/4*
9. *यजुर्वेद 36.17*
10. *तत्रैव*
11. *वहीं*
12. *अथर्ववेद–3.21.10*
13. *डॉ के. सी. श्रीवास्तव – पर्यावरण नैतिकता एवं सतत् विकास – 2008*
14. *डॉ वीरेन्द्र सिंह यादव – पर्यावरण वर्तमान और* भविष्य